Unit VI

रंगाई व छपाई –

बाजार में आपको सिर्फ सफेद कपड़े ही नहीं मिलते, सादे रंग और रंग-बिरंगे डिजाइनों वाले कपड़े भी बाजार में बिकते है। अर्थात् सादे कपड़ों की रंगाई और रंग-बिरंगे डिजाइनों वाले कपड़ों की छपाई की जाती है रंगाई से पूरे कपड़े को एक पक्का रंग दिया जाता है जबकि निर्धारित स्थानों पर रंगाई का प्रयोग छपाई कहलाता है। यह आवश्यक है कि रंगा और छपा हु आ वस्त्र पक्के रंग का हो, नहीं तो प्रयोग करते हु ए धोने, प्रेस करने अथवा रगड़ने पर इसका रंग निकल जाएगा।

रंग का पक्का पन जांचने का एक सरल उपाय है कपड़े के एक कोने पर सफेद रूमाल को गीला करके रगड़िए। यदि गीले रूमाल पर कपड़े का रंग लग जाता है। तो वह रंग कच्चा है तथा वह कपड़ा नहीं खरीदना चाहिए। यदि आपने ऐसा कोई सूती वस्त्र खरीद लिया हैं। जिसका रंग कच्चा है तो उसे नमक डालकर ठंडे पानी में धोइए।

छपाई

हाथ द्वारा ठप्पे से छपाई हेतु एक डिजाइन। इससे ठप्पों की जटिलता का अनुमान लगाया जा सकता है

वस्त्रों के उपर निश्चित पैटर्न या डिजाइन के अनुसार रंग चढ़ाने की प्रक्रिया का **वस्त्रों की छपाई** (Textile printing) कहते हैं। एक अच्छी छपाई वह है जिसमें रंग सूत के साथ एकाकार हो जाय ताकि घर्षण से या धुलाई करने पर भी रंग न छूटे। छपाई, रंजन (dyeing) से सम्बन्धित तो है किन्तु भिन्न कार्य है। रंजन की क्रिया में सम्पूर्ण सूत को एक ही रंग से समान रूप से रंग दिया जाता है जबकि छपाई की प्रक्रिया में

एक से अधिक रंग केवल कुछ चुने हुए स्थानों पर ही लगाये जाते हैं। प्रिन्टिंग की क्रिया में काष्ट के ठप्पे, स्टेंसिलें, नक्काशी की हुई धातु की प्लेटें, रोलर या सिल्कस्क्रीन आदि का उपयोग किया जाता है। छपाई में प्रयुक्त रंजक इतने गाढ़े बनाये जाते हैं कि वे सूक्ष्मनलिका-क्रिया (कैपिलरी-एक्शन) द्वारा पसर न सकें।

बातिक छपाई

छींट (Chhintz), गत (Blotch), बँधनी (Tie Dyeing) और बातिक (Batik) आदि शब्द वस्तुतः छपाई की क्रियाविशेष के सूचक हैं। छींट और गत की छपाई यंत्रों से की जाती है। छींट में रंगीन भूमि कम ओर गत में लगभग सभी वस्त्र रंगचित्रों से ढका होता है। बँधनी में कपड़े को डोरी से बाँध कर रंग के विलयन में रँगाई की जाती है। बातिक में मोम अथवा रोजिन का प्रयोग किया जाता है और कपड़े पर रंग की बहुलता होती है। छींट की छपाई में ही उत्पादन सबसे अधिक और व्यय सबसे कम हो सकता है। ये छपे हुए कपड़े प्रायः सभी प्रकार के व्यक्तिगत रुचि के अनुरूप तथा आकर्षक होते हैं। एक की दूसरे से तुलना कर किसी को घटिया और किसी को बढ़िया कहना बड़ा कठिन है।

बँधनी छपाई

कपड़े की छपाई को दो भागों में बाँटा जा सकता है : (1) सिद्धांत (principles) और (2) कार्यप्रणाली (practice)। सिद्धांत में वे सभी बातें आ जाती हैं जिनसे कपड़े पर पक्का रंग चढ़ता है। विधान या व्यवहार में उपकरणों का उपयोग और यथार्थ उत्पादन आदि आते हैं।

आज से कोई सौ वर्ष पूर्व, प्राकृतिक रंगां को ही रंगाई या छपाई के काम में लाया जाता था। ये रंग वानस्पतिक, जांतव अथवा खनिज स्रोतों से उपलब्ध होते थे। हल्के या गाढ़े विलयनों में विभिन्न रंगस्थापक (mordants) का प्रयोग कर इंद्रधनुष के सभी वर्ण प्राप्त कर लिए जाते थे। विज्ञान के विकास के साथ-साथ कृत्रिम रंगों का भी उत्थान हुआ। प्राकृतिक रंगों को अब लोग भूल गए। रँगाई और छपाई में प्रयुक्त रगों का वर्गीकरण दो प्रकार से किया जाता है : एक रँगाई की प्रणाली के आधार पर और दूसरा रंगों में रासायनिक संघटनों के आधार पर। पहले वर्गीकरण से इस बात का पता लगता है कि रंग विशेष की बंधुता (affinity) रेशे रेशे के अनुसार होती है और दूसरे से रंगप्रदत्त वर्ण की दशा - कच्चा, पक्का, चमकीला और लाल, पीला, नीला आदि - निश्चित होती है।

रँगाई हो या छपाई, रंगत लाने के लिये कुछ बातें ध्यान में रखना आवश्यक है, जैसे रंग को लिए दशा में उपस्थित करना, उसको किसी उचित माध्यम द्वारा रेशे या कपड़े के संपर्क में लाना अदि। रँगाई में पानी और छपाई में माड़ी (thickening) तथा रंगवाहक उपयुक्त हेते हैं। रंग रेशे के अंदर प्रवेश करे, इसके लिए गरमी या भाप देना अथवा कुछ और सहायक क्रियाएँ भी करनी पड़ती हैं, जोरंग की जाति पर निर्भर करती हैं। प्रत्येक रंग को विलेय बनाने के लिये, उसके अनुरूप उचित रसायन को पानी के साथ मिलाकर फेंटना, चलाना, गरम करना, उबालना और कभी ठंडा करना पड़ता है। आवश्यक वस्तुएँ मिलाकर, झीने कपड़े से छानकर यंत्रों द्वारा छपाई की जाती है। भाप और नमी के संयोग से

रंग विषयक क्रियाएँ सक्रिय हो जाती हैं और इस प्रकार रेशे पर रंग चढ़ता जाता है। छापने के पूर्व कपड़े को धोकर तैयार करना आवश्यक है, नहीं तो कपड़ा रंग नहीं पकड़ता। छपाई के अंत में सुखाकर, रंग उड़ाने के लिए अवकरण, आक्सीकरण इत्यादि यथोचित क्रियाएँ भी करनी पड़ती हैं। सबसे पीछे उबलते साबुन के पानी से धोकर माड़ी, अनावश्यक मसाले और निष्क्रिय रंग निकाल दिए जाते हैं। तब कपड़ा सुखाया और परिसज्जित किया जाता है।

छपाई की विधियाँ

कपड़े पर छींट की छपाई चार विधियों से की जाती है :

- (1) हाथ ठप्पों (hand blocks) से,
- (2) मशीन के द्वारा ठप्पों से (machine block, or perrotine printing),
- (3-क) स्टेन्सिल (stencil) की छपाई,
  - (3-ख) स्क्रीन (screen) की छपाई,
- (4) ताँबे को खुदी हुई चद्दरों से छापे की छपाई (flat press printing from engraved copper plates) तथा
- (5) बेल छपाई (roller printing)।

हाथ के ठप्पे और स्टेंसिल

स्क्रीन की लोकप्रियता अधिक है, पर बेलन प्रिंटिंग का उत्पादन अधिक होने से माल सस्ता तथा सर्वसुलभ होता है।

हाथ ठप्पे (Hand Blocks) - ये कई प्रकार के हाते हैं : केवल लकड़ी के, ताँबे के, लकड़ी के ठप्पों में ताँबे की पत्तियाँ लगाकर और बहुरंगी ठप्पे (multicolour blocks) आदि। लकड़ी के ठप्पे कड़ी और सीझी हुई (seasoned) लकड़ी से बनाए जाते हैं। ये आवश्यकतानुसार 6फ़ फ़ चौड़े और 8फ़ फ़ लंबे हाते हैं, पर वांछित अभिकल्प के अनुसार छोटे भी न होने चाहिए कि काम करने में असुविधा हो। अभिकल्प उभरे हुए (in relief) हाते हैं। इनमें खोदाई करने में देर लगती है और ये जल्दी घिस जाते हैं। इस विधि के अन्य दोष ये लें कि हाथ से काम करने में उत्पादन कम होता है और छीपे (छापनेवाले) को परिश्रम अधिक करना पड़ता है। परंतु इस कला का सबसे बड़ा गुण यह है कि हाथ ठप्पे के द्वारा, कितना ही लंबा चौड़ा कपड़ा क्यों न हो छापा जा सकता है, जो किसी अन्य विधि से असंभव है। इसके अतिरिक्त अलंकारिता (ornamentation) की दृष्टि से भी यह अपना विशिष्ट स्थान रखती हैं।

इसके व्यवसाय में व्यय कम लगने से घरेलू धंधों में इसका चलन है। ठप्पा रग लगाने का साधन है। रंग थाली से लिया जाता है। यह लकड़ी की आयताकार होती है जिसकी तली में आजकल रबर की चादर लगाने का रिवाज़ चल गया है, इस थाली में आवश्यक समग्री, मिश्रित रंग क पेस्ट भर दिया जाता है। इसके ऊपर बाँस की पतली खपच्चियों से बनी एक टटिया रख दी जाती है। इसे इसी टटिया के बराबर जूट, टाट या कंबल के टुकड़े से ढक दिया जाता है। इन सब के ऊपर टाट के बराबर एक मलमल का टुकड़ा बिछा दिया जाता है। इन सब के ऊपर टाट के बराबर एक मलमल का टुकड़ा बिछा दिया जाता है। टाट और मलमल को रंग के पेस्ट में भिगोकर, साधारण निचोड़ कर और तब अच्छी तरह खोलकर इस प्रकार बिछाना चाहिए कि उनमें सिकुड़न न रहे। इस प्रकार विछी हुई गद्दी पर सरलता से आगे पीछे बदलकर, ठप्पे में दो बार रंग लगाकर, तब कपड़े पर लगाना चाहिए। कपड़े पर रंग लगाने से पूर्व उसे मेज पर बिछा लिया जाता है।

यह मेज छपनेवाले कपड़े की लंबाई चौड़ाई को ध्यान में रखकर, लगभग 11 फीट लंबी, 30 इंच चौड़ी और 45 इंच ऊँची, होनी चाहिए। परंतु बैठकर काम करनेवाले लगभग 60 इंच लंबी, 30 इंच चौड़ी और 15 इंच ऊँची मेज पर सुविधापूर्वक काम करते हैं। मेज प्रत्येक दशा में चौरस और भारी होनी चाहिए, जिससे हिले नहीं। उसपर पहले एक मोटा कंबल बिछाकर, उसके ऊपर उबाली हुई कोरी खद्दर (back grey) की कम से कम दो या चार तहें देकर तब छपाई का कपड़ा इस प्रकार फैलाना चाहिए कि उसमें सिकुड़न न रहे। कोई कोई छीपे बारक कपड़े की छपाई करते समय उसे बबूल के काँटों अथवा आलपिनों से स्थिर कर देते हैं। इसके पश्चात् ऊपर बताए अनुसार ठप्पे को रंगकर छपाई की जाती है। अभिकल्प को ध्यान में रखते हुए कपड़े पर, उसे मोड़कर, रेखाएँ निर्धारित कर ली जाती हैं। इन्हीं के सहारे छपाई आगे बढ़ती है।

स्टेंसिल की छपाई (Stencil Printing)

कागज के ऊपर चित्र बनाकर बच्चे उसे इस प्रकार काटते हैं कि चित्र के छिद्रों से ब्रश द्वारा रंग डाला जाए तो नीचे रखे दूसरे कागज या कपड़े पर वैसा ही चित्र बन जाए। इस कला को स्टेंसिल काटना और इस प्रकार की छपाई को स्टेंसिल की छपाई कहते हैं। कागज़ को स्टेंसिल टिकाऊ नहीं होती, अत: ताँबे की स्टेंसिल का कपड़े की छपाई में उपयोग होता है। ब्रश की जगह एअरोग्राफ गन (aerograph gun) का उपयोग किया जाता है। इस यंत्र में मुख्य दो अंग होते हैं। एक रंग प्याली (colour cup) होती है, दूसरी वायुनलिका, जिससे दबावयुक्त वायु (air under pressure) आती है। जब लिबलिबी (trigger) को दबाया जाता है, हवा आगे बढ़कर रसते हुए रंग पेस्ट से मिलती है और एक बारीक तुंड (nozzle) से फुहारे के रूप में रंग के साथ स्टेंसिल के ऊपर पड़ती है और चित्र के छिद्रों से होकर कपड़े पर तत्सम चित्र बनाती है। एक एक चित्र में दस बारह रंग तक सरलतापूर्वक लगाए जा सकते हैं। इस साधन की यह विशेषता है कि इसमें रंग की आभा (shade) हल्की से हल्की और गहरी से गहरी की जा सकती है। एक कलाकार के हाथों इस विधि द्वारा रंगों की जो अलंकारिता लाई जा सकती है वह असीम है। इसके चित्रित फूलों पर मधुमक्खी या भ्रमर तक सरलता से बनाए जा सकते हैं। परंतु उत्पादन अत्यंत कम होने से स्टेंसिल की छपाई कार्यविशेष के लिए ही सीमित है।

स्क्रीन की छपाई (Screen Printing)

स्टेंसिल का विकसित रूप स्क्रीन है। स्क्रीन जाली (gauze) से बनाई जाती है। रेशम का कपड़ा (silk cloth), अरंगडी (organdie), ताँबे के तारों की जाली, आधुनिक टेरिलीन (terylene) या नाइलॉन (nylon) का कपड़ा इत्यादि स्क्रीन बनाने में प्रयुक्त होते हैं। कुछ रंगों के पेस्ट में दाहक सोडा पड़ता है, जिससे रेशम का कपड़ा धीरे-धीरे गल जाता है। ऐसी दशा में रेशम का कपड़ा अनुपयुक्त होता है। जाली या कपड़े की लकड़ी के आयताकार साँचे में खींचकर लगाया जाता है। लकड़ी की छोटी छोटी खपच्चियों को लगाकर चारों ओर खाँचे में अच्छी तरह कस दिया जाता है। इस आयत की दीवार लगभग तीन इंच ऊँची, आधी इंच मोटी और छह इंच लंबी होती है। आयत की चौड़ाई चार फुट के लगभग हो सकती है। अभिकल्प को जाली पर राल वार्निश, या सेलूलोज़ लाक्षारस (cellulose lacquer) से इस प्रकार बनाया जाता है कि जहाँ चित्र हो वहाँ लाक्षारस न लगने पाए और शेष सब स्थान लाक्षारस से भर जाएँ। इस प्रकार बनाई स्क्रीन पर जब रंग डालकर, रबर के निपीड़क (squezee) से रंग आगे पीछे खींचा जाएगा, तब रंग चित्रित स्थानों को पारकर कपड़े पर पहुँच जाएगा। इस प्रकार स्क्रीन की छपाई की जाती है।

निपीड़क आध इंच मोटे, दो इंच चौड़े और अभिकल्प की चौड़ाई के अनुसार दो फुट लंबे इंडिया रंबर के खंड को लकड़ी के खाँचेदार तीन इंच मोटे और दो फुट लंबे हत्थे में जमा कर बनाया जाता है। ठप्पे की छपाई के लिए बनाए गए नियमों के अनुसार स्टेंसिल और स्क्रीन में भी कपड़ा मेज के ऊपर बिछाया जाता है। मेज की लंबाई स्क्रीन में 100 गज तक तथा चौड़ाई कपड़े की चौड़ाई से कुछ अधिक रखी जाती है। यह मेज छपाई धुलाई की सुविधा के लिए एक ओर को कुछ ढलुवाँ होती है। जहाँ गरमी देने का साधन है वहाँ मेज का ऊपरी तल धातु का, जैसे जस्ते की चादर का, होता है। कहीं कहीं आजकल सीमेंट का भी उपयोग होता है। कपड़े को स्थिर रखने के लिए ऊपर मोम लगा दिया जाता है।

इस दशा में मेज के ऊपर बेठन (कंबल, बैक ग्रे आदि) न भी रहे तो कोई असुविधा नहीं होती। मेज पर और स्क्रीन की लकड़ी में सानुपातिक खाँचे (catch points) बने होते हैं जिससे अभिकल्प दोबारा रखने (repeat) अर्थात् लगाने में आसानी पड़े। भारतीय कपड़े की मिलों में, विशेषकर जहाँ कृत्रिम रेशम या रेयन बनता है, इस पद्धति से छपाई बड़े पैमाने पर होती है। स्क्रीन का उपयोग रेशम की छपाई में इसलिए अधिक मान्य है, क्योंकि रोलर प्रिंटिंग मशीन पर सुविधापूर्वक उसे नहीं छापा जा सकता। कपड़े का रूप भी कुछ बिगड़ जाता है। अहमदाबाद, मुंबई और वाराणसी में स्क्रीन की छपाई घरेलू धंधों के रूप में भी काफी प्रचलित है। जापान और स्विट्जरलैंड तो इसके केंद्र ही हैं।

स्क्रीन की छपाई का विकास अभी थोड़े दिन पूर्व ही हुआ है, परंतु जो उन्नति छपाई के इस साधन की हुई है वह सराहनीय है। इस कला के संरक्षक इसे रोलन प्रिंटिग से भी अधिक लोकप्रिय बनाने का भरसक प्रयत्न कर रहे हैं। परंतु फिर भी अभी इसका उत्पादनव्यय रोलर छपाई की अपेक्षा अधिक पड़ता है। यह बात अवश्य माननी पड़ेगी कि अलंकारिता की दृष्टि से यह कहीं आगे बढ़ गई है और कुछ विशिष्ट अभिकल्पों के लिए, जैसे गलीचे आदि की छपाई (panel printing) में, अपना जोड़ नहीं रखती।

इतने थोड़े समय में ही इस छपाई के लिए नाना प्रकार की मशीनें बन गई हैं, जो ऐसे नवीनतम आधुनिक यंत्रों से युक्त हैं जिनसे छपाई एक ओर, या कपड़े के दोनों ओर, हो सकती है, अथवा दो कपड़े एक साथ छापे जा सकते हैं। मोटे से मोटा और पतले से पतला कपड़ा बिना विकृत हुए सुंदर चित्रों और चटकीले गहरे रंगों में छापा जा सकता है। प्रत्येक कार्य, जैसे मेज पर कपड़ा लगाना, आगे बढ़ाना, स्क्रीन उठाकर कपड़े पर रखना, इसे छापकर हटाना, मेज धोना, मेज को यथोचित गरम करना, छपा हुआ कपड़ा निश्चित ताप पर सुखाना और उसके बाद की क्रियाएँ आदि, सभी स्वचालित यंत्रों से होती हैं। किसी को हाथ तक लगाने की आवश्यकता नहीं होती। चालक और विशेषज्ञ मशीन की गति और रंग, पेस्ट आदि का आवश्यक नियंत्रण और सामंजस्य बनाए रखते हैं।

हाथ के काम में चार आदमियों द्वारा, 60 गज की मेज पर, आठ घंटे में लगभग 400 गज कपड़ा और मशीन द्वारा लगभग 600 गज कपड़ा छापा जा सकता है।

बेलन छपाई विधि या सिलिंडर प्रिंटिंग (Roller or Cylinder Printing)

यह आजकल की छींट की छपाई का आधुनिकतम और पूर्ण सफल साधन है। इस यंत्र का आविष्कार 1785 ई. के लगभग एक अंग्रेज सज्जन, बेल, (Bell) ने किया, यद्यपि इससे पूर्व फ्रांस और अन्य देशों में भी इसका स्वरूप सोच लिया गया था और संभवत: कुछ प्रयोग इसपर हुए भी थे, तथापि सफलता का श्रेय बेल को ही प्राप्त हुआ।इस यंत्र में वे सभी आवश्यक अंग हैं जो छपाई के लिए अनिवार्य होते हैं। इसमें मेज की जगह सिलिंडर और ठप्पों की गद्दियों के स्थान पर रंग थाली (colour furnisher) और लकड़ी के ठप्पों के बजाय ताँबे के बेलन (copper rollers) होते हैं।

लोहे के सिलिंडर पर लचीलापन लाने के लिए एक ऊनी फलालेन (woollen flannel), या फलालेन के अभाव में धुली हुई दोसूती, लपेटकर एक ऊनी कंबल लगाया जाता है। इसके दोनों सिरे मिलाकर सी दिए जाते हैं, जिससे इसमें सिरा नहीं होता और लगभग 40 गज लंबा होता है। उसके ऊपर धुली कोरी मारकीन (back grey) होती है। इस सब की चौड़ाई बेलन के बराबर, परंतु बैक ग्रे छपनेवाले कपड़े से कुछ बड़ा होता है। सबसे ऊपर छपनेवाला कपड़ा होता है।

ताँबे के बेलन, जिनपर अभिकल्प (design) बने होते हैं, सिलिंडर को दबाते हुए कपड़े के साथ घूमते हैं और रंगथाली में फिरते हुए बेलन से रंग मिलता है। तब उसकी दबी हुई जगहों में रंग भर जाता है और बेलन में सभी जगह रंग लग जाता है। कपड़े के पहले बेलन पर एक पैनी छुरी (Doctor Knife) लगी होती है। यह अनावश्यक रंग को निकाल कर चिकने धरातल को बिलकुल साफ कर देती है। दबाव पड़ने पर कपड़ा दबी जगहों में स्थित रंग को लेकर छपाई की क्रिया पूर्ण करता है। कपड़े पर लगे तागे आदि छपाई बेलन पर लग जाते हैं। उनको निकालने के लिए दूसरी ओर कुंद छुरी (Lint Doctor) होती है।

मशीन से निकालकर कपड़ा सुखाया जाता है। यह क्रिया गरम किए हुए कमरे में, या भाव से गरम किए हुए सुखानेवाले यंत्र (Drying Machine) के सिलिंडरों (cylinders) पर की जाती है। गरम नलियों (hot tubes) के संपर्क से इसी प्रकार बैक ग्रे भी सुखाया जाता है। चलते चलते कड़ा हो जाने पर इसे धोकर साफ कर लिया जाता है। कंबल के स्थान पर मैकिनटॉश (mackintosh) का भी उपयोग किया जाता है। यह रबर लगा हुआ कपड़ा होता है, जो पानी से नहीं भीगता और जिसपर दाहक सोडा जैसे खारे पदार्थों का प्रभाव भी कम पड़ता है, जबकि कंबल बैक ग्रे से रक्षित रहने पर भी खराब हो जाता और कम दिन चलता है। कपड़े पर लगे रंग में कमी तथा उसका विकास एक विशेष प्रकार प्रकर के कमरे में किया जाता है, जिसमें भाप भरी होती है। इसे भाप कमरा (Ager) कहते हैं।

इसमें लोहे की लगभग आधी इंच मोटी दीवार चारों ओर होती है। कमरे की तली में भाप नलिकाएँ होती है। कुछ छिद्र सहित और कुछ छिद्र रहित। जब सूखी भाप की आवश्यकता होती है, जब छिद्र रहित को और जब गोली भाप की जरूरत होती है तब छिद्रित नलिकाओं को खेला जाता है। इनसे ताप 100 डिग्री सें. के निकट तक ही प्राप्त किया जा सकता है, परंतु कभी कभी 105 डिग्री सें., या इससे भी अधिक, ताप वांछित होता है। इसलिए आजकल ऐसे कमरे के बाहर भी छोटे छोटे, मोटे लोहे की चादर के संदूक की तरह भापकक्ष (Steam Chest) लगा दिए जाते हैं। इनमें भाप भारी दबाव में रहने से ऊपर की छत और दीवारें आवश्यकतानुसार अधिक गरम की जा सकती हैं। कपड़ा कमरे के अंदर ताँबे के फिरते हुए बेलनों पर चलता है और तीन मिनट से 10 मिनट तक उसके अंदर रखा जाता है। छपा हुआ कपड़ा चाहे हाथ ठप्पों का हो, चाहे स्टेंसिल, स्क्रीन या रोलर मशीन का, सभी इन बेलनों पर चलाकर विकसित किए जा सकते हैं।

बातिक (Batik)

अनुमानत: यह संस्कृत शब्द "वार्तिक" से बना है, जिसका अर्थ बत्ती होता है। इस क्रिया में प्रयुक्त मोमबत्ती के आधार पर इसका यह नाम पड़ा है। मोम लगाकर कपड़े को बत्ती की भाँति लपेट कर रंगाई के लिए झुर्रियाँ (cracks) डाली जाती हैं। संभवत: प्रारंभ में यह कला दक्षिण भारत के समुद्री तटों पर प्रचलित थी। वहीं से पूर्वी देशों - जावा, सुमात्रा की ओर जाकर उन देशों की मुख्य छपाई कला हो गई। अब इसका प्रचार हमारे देश में नहीं है। शांतिनिकेतन के कुछ कलाकार कला के रूप में इसे प्रदर्शित करते हैं। व्यापारिक वस्त्र छपकर जावा में ही तैयार होता है, भारत में नहीं। इस प्रथा से छपा हुआ कपड़ा बड़ा आकर्षक, सुंदर, उसकी अलंकारिता अत्यंत जटिल, विचित्र और अनेक रंगों से युक्त होती है। इसकी छपाई में अधिक समय और अनुभव एवं कार्यदक्षता की विशेष आवश्यकता होती है। जावा और अन्य पूर्वी देशों में इस प्रकार के कपड़े उत्सवों और विशेष अवसरों पर पहनने का चलन है। 17वीं, 18वीं और 19वीं शताब्दी में इसका विकास अधिक हुआ तथा यह चीन, जापान, इंडोचीन और पश्चिम में हालैंड, जर्मनी एवं फ्रांस तक में फैल गया था। अंत में बेलन छपाई के सामने यह कला टिक न सकी, विशेषकर पश्चिम में और अब केवल जावा इसका केंद्र रह गया है।